RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-02
February-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

उड़िया कहानियों में सामाजिक सौंदर्यबोध और संवेदनात्मक दृष्टि

डॉ. रमेश कुमार गोहे

सहायक प्राध्यापक, गुरु घासीदास विश्वविद्यालय बिलासपुर (छ.ग.)

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 20 February 2019

Keywords
कहानी, संवेदना, सामाजिक भावबोध, सौंदर्यबोध, सामाजिक परिवेश।

ABSTRACT

गद्य का विकास भारत के विभिन्न हिस्सों में प्रायः एक समय ही हुआ और इसके लिए महत्वपूर्ण कारक मुद्रण यंत्रों की स्थापना ही मानी जाती है। जब कटक में मुद्रण यंत्र की स्थापना की गई वह 19वीं शताब्दी का अंतिम चरण था। फिर वहां कई पत्रिकाएं प्रकाशित हुईं। भले ही देशी भाषाएं हमें स्वतंत्र रूप में दिखाई देती हैं किंतु उनकी सांस्कृतिक यात्रा भी कठिन है। कहीं-कहीं तो उनके सामंजस्य के साथ आगे बढ़ने की कहानी मिलती है और कहीं आपसी आंतरिक विरोध। "अंग्रेजी राज कायम होने पर ऐसा विरोध बंगला-उड़िया, बंगला-असमिया के बीच दिखाई देता है। सहयोग और आंतरिक विरोध दोनों ही देशी भाषाओं में साहित्य-रचना-प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं।"[1] अगर यहां ध्यान दिया जाए तो उड़िया-बंगला दोनों पृथक होकर अपनी-अपनी भाषाओं में साहित्य को समृद्ध ही करती हैं। उड़िया कहानियों के अध्ययन में भाषा और उसके विकास की ओर एक दृष्टि डालना ठीक ही होगा। इस आलेख का उद्देश्य उन्हीं कहानियों में से कुछ चुनिंदा कहानियों की विवेचना करना है, जहाँ कहानियों के संवेदनात्मक पक्ष की पड़ताल करना ही इस आलेख का ध्येय होगा।

उड़िया कहानी के विकास के प्रथम चरण में ही भाव और कला की दृष्टि से स्पष्ट और एक आदर्श परंपरा का निर्माण कर चुकी थी। सबुज आंदोलन को दूसरा चरण मान सकते हैं। जिसने कई तरूण को कथाकार के रूप में स्थान दिया। सबुज एक तरह से प्रगतिवादी आंदोलन था, जिसमेंग्रामीण जीवन के साथ-साथ ही कई समस्याओं पर लेखन किया गया। इसके बाद स्वतंत्रता काल का समय था उसके अनुरूप भी कहानी लेखन हुआ। समसामयिक कहानियों में जीवन की पीड़ा, संत्रास, महानगरीय जीवनमूल्य, मनोविज्ञान, अंतर्द्वंद आदि विषयों पर कई कहानियां लिखी गईं।

फकीर मोहन सेनापति को प्रथम उड़िया साहित्यकार का सम्मान प्राप्त है और उनकी लिखी कहानी रेवती को प्रथम उड़िया कहानी का गौरव प्राप्त है। रेवती में हैजा महामारी का वर्णन है। संभवत हैजा जैसी कई महामारियों के समय देश की दशा का चित्रण उस कहानी में खींचा है। इसके साथ ही उड़िया के प्रमुख कहानीकारों में चंद्रशेखर नंद दूसरे क्रम के कथाकार हैं। उनका लेखन सुधारवादी श्रेणी का है।

लक्ष्मीकांत महापात्र की उड़िया कहानी 'बूढ़ा मनिहार' एक ऐसी कहानी है जिसमें वृद्धजन विमर्श के साथ-साथ ही रिश्तों के परिवर्तन को भी दिखाया गया है। लेखक की संवेदना जहां वृद्धजन समस्या और उसकी जीवटता पर केंद्रित है, वहीं अपने कर्म के प्रति लगन और एक बनाए गए रिश्ते के लिए समर्पण को भी दिखाया गया है। वास्तव में "मूल्य सदैव विवशता के भीतर उपजता है व संबंधों के लिए उपजता है। वैसी ही हालत में हमारी प्रतिबद्धता भी अर्थवान हो सकती है जहां से सांस्कृतिक रुचि का विकास होना प्रारंभ होता है।"[2]

बूढ़ा मनिहार एक अभिजात्य परिवार की बहू को अपनी चूड़ियां दिखाता है। पहली बार वह उस हवेली की बहू को देखता है तो अपलक ही उसके सौंदर्य को देखता रहता है और सौंदर्य देखकर जब उसकी आंखें तृप्त हो जाती हैं तब वह जो बोलता है वह आश्चर्यजनक रिश्ता होता है । वह बहू, बेटी या बहन जैसे रिश्तो से भी संबोधित कर सकता है पर ना जाने उसे क्या युक्ति सूझी और वह कहता है "मां कहो क्या पसंद है? मां संबोधन से वह अपने आप फूला नहीं समाता। बहू ने शर्म छोड़कर कहा -आसमान तारा वाली चूड़ियां हैं?"[3]

कहानीकार की संवेदना यहां सौंदर्य से ज्यादा उसके लावण्य, कोमलता और मर्यादित सौन्दर्य पक्ष पर उभर कर सामने आती है। समानांतर अन्य कहानियों की नायिका एक प्रेमिका के रूप में या पूर्वनायिका की हमरूप में नजर आती हैं । पर यहाँ नायिका स्त्रीत्व का श्रेष्ठ पक्ष जो कि उसका ममत्व है, उसका स्त्रीत्व भी है। उस मुकाम तक जाती है। उन्हीं संवेदनात्मक रूपों में यह कहानी अन्य कहानियों से अपना अलग स्थान रखती है। कहानीकार इस माँ के बनाए हुए रिश्ते का निर्वहन उसी तरह करवाते हैं जैसे सचमुच कोई बेटा अपनी मां की समस्याओं के लिए चिंतित रहता है।

बूढ़ा मनिहार चूँकि बहुत बूढ़ा हो चुका है, पर वह मरने से पहले अपनी मां के लिए एक बार आसमान तारा वाली चूड़ियां जरूर लाना चाहता है। चाहे फिर उसे कहीं से भी, किसी भी बाजार से लाना पड़े । वह

RRIJM 2015, All Rights Reserved

सभी बड़ी दुकानों में, बाजारों में जाकर खोजता है और उसे जब आसमान तारा वाली चूड़ियां नहीं मिलतीं, तो वह स्वयं आसमान तारा वाली चूड़ियां बनाना तय करता है। वह यह भी सोचता है कि कहीं उसकी मां को दूसरे के हाथों की बनी चूड़ियां पसंद ना आयें तो? इसलिए वह स्वयं ही उन चूड़ियों को बनाएगा और अपनी मां की कलाइयों में पहनाएगा। वह दिन भी तय कर लेता है कि इस बार रज संक्रांति का त्यौहार तय कर लेता हूं। उसी दिन माँ के हाथों में आसमान तारा वाली चूड़ियाँ पहनाऊंगा। अपनी मां को आसमान तारा वाली चूड़ियां देने के लिए "साठसाल के अपने मनिहार जीवन में जो कारीगरी और निपुणता उसने प्राप्त की थी उसके उपयोग से चूड़ियां तैयार कीं। ऐसी बनावट की चूड़ियां कभी उसके हाथ से बनी ही ना थी। चूड़ियां देखकर बूढ़े का दिल खुश हो गया। मां जी की कलाइयों में यह चूड़ियां खूब सोहेंगी।"[4]

बूढ़ा मनिहार अपने जीवन का अंतिम और सबसे बड़ा उद्देश्य सिर्फ और सिर्फ अपनी मां के लिए आसमान तारा वाली चूड़ियां बनाने का ही रखता है उसके जीवन की अंतिम यही एक इच्छा बची थी, जिसके पूरे होते ही वह चूड़ी बेचना भी बंद कर देना चाहता है। उसके द्वारा बनाए गए मां रिश्ते के लिए वह इतना ज्यादा समर्पित है कि कई दिनों की बीमारी से उठने के बाद भी चक्कर खाता, लड़खड़ाता हुआ अपनी मां के लिए कस्बे की ओर अपने हाथों से बनाई गई चूड़ियां लेकर निकल जाता है। जब दरवाजे पर पहुंचकर बहुत देर तक उसकी मां नहीं निकलती तो छटपटाता है कि कब मां को देख लूं, कब उसे ये चूड़ियां पहना दूं, वह ये चूड़ियां देखकर कितनी खुश हो जाएंगी और यह दृश्य देखकर वह कितना तृप्त होगा। उसे आज अपने जीवन की सबसे बड़ी प्रसन्नता मिलने वाली थी, पर शायद नियति को यह मंजूर नहीं था। उसकी मां विधवा हो गई थी और अब वह किसी भी प्रकार की चूड़ियां नहीं पहन सकती थी। उसके बार-बार जिद करने पर भी जब उसकी मां बाहर नहीं आती तो, मां को आवाज देकर बुलाया जाता है और वह देहरी पर आकर खड़ी होती है तो उसे सफेद वस्त्र में एक विधवा स्त्री के रूप में देखकर वह गमछे में बंधीं चूड़ियां वही आंगन में पटक कर तोड़ देता है और बिल्कुल एक बालक की भांति रोता हुआ अपने घर लौटने लगता है। वह भी रोता हुआ लौट रहा था, उस हवेली में मालकिन और नौकरानी भी रो रही थीं। और उसकी मां उसे अपना विधवा रूप दिखाकर, पहले ही घर के अंदर जा चुकी थी।

लक्ष्मीकांत महापात्र की यह कहानी इस रूप में बिल्कुल अलग श्रेणी की कहानी ठहरती है, जिसमें रिश्तों के परिवर्तन रूप को दिखाया गया है, जो सामान्य लगते हुए भी उन तमाम आदर्शों, मर्यादाओं, नैतिकताओं का पालन करने वाले रिश्तों से आगे निकलकर कहीं वात्सल्य, तो कहीं भावुक क्षणों की ओर उन्मुख हो जाते हैं। बल्कि इनरिश्तों का आधिकारिक महत्व शब्दों की मर्यादाओं में निहित ना होकर, बहते आंसुओं की करुणा में निहित होता है।

वैसे तो आधुनिक सभ्यता की पहचान के लिए औद्योगिक क्रांति और नगरीकरण जैसी चीजें ही जिम्मेदार हैं। सभ्यता ने आधुनिकता के साथ ही कई बड़े-बड़े विकास भी किए हैं, पर साथ ही जीवन शैली भी बदली है। जीवन की गति भी बदली है। कई नगर आज सिर्फ भागदौड़ के लिए ही जाने जाते हैं। दिल्ली, मुंबई, कोलकाता जैसे महानगरों में 90-100 किलोमीटर तक का सफर रोजमर्रा के जीवन में आम बात हो गई है। पर इन सब बातों से थोड़ी सी अलग एक सभ्यता जो हम पीछे छोड़ आए हैं । उसमें सफर का आनंद, सफर के साथ प्रकृति का आनंद, आराम का सफर और भी कई सारी बातें एक साथ याद आ जाती है। वह दो पहियों की बैलगाड़ी का सफर था या टांगे का सफर था कहीं अकेले चलना है तो घुड़सवारी थी और पहाड़ों, रेगिस्तानों में खच्चर या ऊंटों की पीठ पर चलने का सफर था और गाड़ी के सफ़र में गाड़ीवान जैसा चरित्र कौन भूल सकता है भला? चाहे फिर वह नदिया के पार फिल्म का चंदन हो या रेणु की कहानी का हीरामन हो या फिर गोदावरीश महापात्र की ओड़िया कहानी मांगुणी की बैलगाड़ी का मांगुणी हो। किसान जीवन संस्कृति में बैल और बैलगाड़ी बड़ी ही अहम चीजें हैं और थी। थी इसलिए कि अब नगरीय आबादी में यह कभी-कभार दिखने वाली आश्चर्यजनक चीजें हो गई है । हां गांव में अब भी इनकी जरूरत है पर वह भी लगातार कम हो रही है। यातायात के लिए मोटर बसों के चलने के बाद से कई गाड़ीवानों का जीवन संघर्ष पूर्ण तरीकों से बीतने लगा और उनकी गाड़ी फिर खाली ही रहने लगी । मांगुणी की बैलगाड़ी इसी विडंबना पर लिखी गई कहानी है। रेणु की कहानी तीसरी कसम में भी रेल है पर अभी बैलगाड़ी का महत्व कम नहीं हुआ है। कहानीकार ने मांगुणीको एक बड़े चरित्र के रूप में खड़ा किया है भले ही वह कोई राजा, मंत्री, वकील या नेता नहीं था।

खलीकोट की दो लाख आबादी वाले क्षेत्र में सब उसे जैसे एक नायक के रूप में जानते थे ।वह एक नायक था, गाड़ीवान था। सब उसकी गाड़ी में एक बार बैठना चाहते थे। वह बातूनी था, किस्सागो था, एक अच्छा अभिनयकर्ता था। कहानी सुनाते-सुनाते वह रोने का रोल भी कर लेता था और रोने का अभिनय भी कर लेता था। हर तरह से वह अपनी सवारी का मनोरंजन करता हुआ गाड़ीवानी कर सकता था और कर ही रहा था। हर परिस्थिति में चाहे धूप हो , बारिश हो या कड़ाके की ठंड, उसकी गाड़ी का समय नहीं चुका था । इसलिए उसकी गाड़ीवानी और निष्ठा पर लोगों का भरोसा जग गया था। गाड़ीवानी की निष्ठा उसमें जैसे कूट कूट कर भरी थी।"खलीकोट गढ़ी में रोज सूरज उगता है और डूबता है, जिस दिन वर्षा होती रहती है उस दिन भी मांगुणी को देख समय जान जाते हैं। माघ के महीने में जब लोग ठंड के मारे गर्म कपड़े ओढ़कर बरामदे में बैठे रहते हैं तब मांगुणी अपने चिर-परिचित दोनों साथियों को गाड़ी में जोतकर गीत गाता हुआ पहाड़ों की तलहटी में चला जाता है। लोगों का कहना है कि मांगुणी स्वयं एक घड़ी है । वर्षा ऋतु में पानी बरसना टल सकता है या गर्मी में घाट बढ़ हो सकती है पर मांगुणी की गाड़ी का चलना कभी बंद नहीं होता ।"[5]

कहानीकार ने इसी कहानी में एक और बड़ी संवेदना का स्पर्श किया है। भारतीय श्रेष्ठ नायकों में तुलसीदास ने भले ही राम का वनगमन बनवास दिखाकर राम के चरित्र को और बड़ा किया हो पर सीता के

वनवास पर धोबी के प्रसंग में राम को साफ बचा लेते हैं। यहां कहानीकार गाड़ीवान के सहारे से इस मर्म का भी स्पर्श कर लेता है और गाड़ीवान जब गाड़ीवानी करता है तब एक गीत गाता है- सीता को वनवास दिया काहे राम ने? कहानीकार ने गाड़ीवानी और गाड़ीवान संस्कृति का बेहद व्यापक परिचय दिया है और साथ ही आधुनिक मोटरयान आने के कारण इसका रोजगार छिन जाने की गंभीर समस्या पर इसका अंतिम हिस्सा लिखा है। जब मांगुणीकी गाड़ी में कोई नहीं बैठतातो वह धीरे-धीरे अपना दो समय में से एक समय खाना त्याग देता है और फिर मांड पीकर जीवन चलाने लगता है और एक दिन वह अपनी बैल हांकने की लकड़ी पकड़ कर सो जाता है और फिर नहीं उठता। "जिस दिन मांगुणीके झोपड़े का किवाड़ तोड़कर लोगों ने उसका मृत शरीर बाहर निकाला तो देखा कि फटी कथरी के नीचे अपनी प्रिय लाठी को दबाकर मांगुणी ने आंखें मूंद ली हैं। श्मशान में धू-धू कर आग जलने लगी। आसमान में पंछी उड़ कर धुंए के पार चले गए। दुनिया के दो लाख लोग यह समाचार पाकर दु:खी हो बोले हो मांगुणी गुजर गया।"[6]

उड़िया भाषा की कहानी रेवती हैजा महामारी की त्रासदी पर लिखी एक बड़ी दु:खद वातावरण बनाने वाली कहानी है। परिवार के परिवार हैजा महामारी ने लील लिए थे। एक हंसता खेलता परिवार हैजा महामारी से कैसे खत्म हो जाता है इसकी विडंबना कहानी में है। हम हाल ही में कोरोना महामारी के दौर से गुजरे हैं/गुजर रहे हैं। ऐसी स्थिति में यह कहानी और भी प्रासंगिक हो जाती है। हालांकि इस कहानी में रूढ़ियां और सड़ी-गली परंपराओं का चित्रण भी किया गया है। महामारी को एक ओर पुरानी पीढ़ी अपशकुन जैसी चीज मानती है, वहीं नई पीढ़ी यह जानती है कि यह महामारी है। कहानी में परिवार की सबसे बुजुर्ग महिला जो यह मानती थी कि शिक्षा स्त्री के लिए नहीं है। वह घर की पोती के शिक्षा ग्रहण करने के प्रश्न पर इन्हीं आशंकाओं से गिर जाती है और परिवार में जब एक महामारी से सभी मर जाते हैं तो वह इसके पीछे रेवती को ही अपशकुन मानती है। "वह इस निर्णय पर पहुंची थी कि इतने सारे दुख, दर्द, दुर्गतियों की जड़ रेवती है। रेवती के विद्या पड़ने के कारण ही उसका बेटा मरा, बहू मरी, नौकर हटा बैल बिके, जमीदार ने गाय छीन ली। रेवती कुलच्छिनी, कुचाली, कुलनाशी है। बूढ़ी की आंखों की रोशनी गई उसका कारण भी रेवती की पढ़ाई ही है।"[7]

इसके साथ ही उस समय महामारी को लेकर समाज की जागरूकता का पक्ष भी सामने उकेरा है कि हम महामारियों के बारे में कितना जानते हैं थे। "देहातों में हैजा फैला कि दरवाजे के किवाड़ बंद हो जाते हैं। कहा जाता है कि महामारी देवी बुढ़िया के भेष में टोकरी लेकर गांव में घूमती है और आदमी बटोरती है। द्वार पर कोई नहीं दिखाई देता।"[8]

फकीर मोहन सेनापति की कहानी रेवती का गांव भी प्रेमचंद के गांव से अलग नहीं है। उसके पात्र, वातावरण समस्याएं और विडंबनाएँ बिल्कुल वही हैं। गांव अनपढ़ है, रूढ़ियों से ग्रसित है, भुखमरी, महामारी, बीमारी के समाधान की कोई व्यवस्था नहीं है, स्त्री अशिक्षा जैसी स्थाई बातें हैं। स्त्री शिक्षा को किसी दुर्योग से जोड़ दिया गया है। रेवती जब पढ़ लेती है तो उसकी दादी उसे कुलच्छिनी मानती है और महामारी आने का कारण भी। वह इसी बात को लेकर अंत तक रेवती को गाली बकती हुई मर जाती है। वह इसके लिए रेवती के गुरु की मृत्यु का कारण भी मानती है।" रेवती के गुरु की मृत्यु का समाचार सुनकर बुढ़िया इतना रोई कि उसका गला रुंध गया। अंत में बोली हाय रे तूने प्रवास में अपनी बेवकूफी से जान गंवाई। अर्थात रेवती को विद्या पढ़ाकर बेवकूफी की और मर गया, वरना वह कभी न मरता।"[9] और इस तरह रेवती का पूरा परिवार हैजा के प्रकोप से धीरे-धीरे मर जाता है। कहानी में महामारी की विडंबना तो है ही साथ में अशिक्षा और अशिक्षा के कारण रूढ़ियों में ग्रस्त समाज और ग्रामीण जनजीवन का उल्लेख मिलता है। उड़िया भाषा की एक और अच्छी अनुदित कहानी है आकर्षण। आकर्षण की कहानी बचपन के दो बालसखा की कहानी है। एक लड़का और एक लड़की एक साथ खेलते हैं और एक दूसरे के बिना नहीं रह पाते। वे दोनों एक दूसरे के प्रति आकर्षित हो जाते हैं। हालांकि यह प्रेम बिल्कुल बचपन वाला प्रेम ही है। पर कहानी में यही प्रेम कब बड़ी उम्र का प्रेम बन जाता है और उसकी प्राप्ति के लिए नायिका जीवन के लंबे अरसे तक अपने उस बाल सखा नायक की यादों और इंतजार में बिता देती है और मरणासन्न अवस्था में अपने प्रेमी को एक पत्र लिखती है जो बहुत ही हृदय विदारक होता है।

वास्तव में नायक उस पत्र से ही यह समझ पाता है कि उसकी प्रेमिका कमला अभी तक उसका इंतजार कर रही है वह सोचता है "उस छवि को मैंने अनेकों बार देखा है, उसके साथ खेला है, खाया है। सपने में उसे देखा है, जागरण में पाया है। मैंने अपने को धिक्कारा वास्तव में मैं कितना नीच आदमी हूं। अपनी स्नेहमयी कमला की स्मृति भी खो बैठा हूं। जो अपनी अंतिम घड़ियां गिन रही है और एक बार मुझे जी भर कर देखना चाहती है। मैं उसे विस्मृत कर चुका हूं।"[10] दरअसल यह एक विडंबना की ही कहानी लगती है जो पश्चताप पर खत्म होती है लेकिन नायक यहां कुछ भी कर सकने में असमर्थ है। सिर्फ इतनी सी बात नायक कह कर शांति कर लेता है कि आज मुझे मालूम हुआ कि "पिताजी मुझे गांव क्यों नहीं जाने देते थे।"[11] इस कहानी का अंत इतना भावुक नहीं करता जितना कहानी में चंपा के फूल तोड़ते समय नायक पेड़ से गिरने पर बेहोश हो जाता है। उसका इलाज करवाया जाता है और फिर वह अपने पिता के साथ नगर चला जाता है। नायक को कमला का साथ खेलना एक सहज ही साथी का साथ लगता है। जैसे बचपन में कई साथी होते हैं। पर कमला कब उसे अपना जीवनसाथी मान चुकी होती है, यह किसी को नहीं पता और नायक कमला से मिलने के लिए कभी उस तरह से चिंतित भी नहीं दिखाई देता। एक तरह से भावशून्य। जैसे कमला को वह भूल ही चुका था "चंपे के पेड़ से गिरने वाली घटना प्राय:विस्मृत हो चुकी थी। गांव जाने की इच्छा भी कभी नहीं हुई। पिताजी भी मुझे कभी गांव नहीं भेजते थे।"[12]

इस विडंबना के लिए नायक विनोद जब अपनी प्रेमिका कमला को अंतिम बार देखने पहुंचता है उसे उसकी मृत देह ही मिलती है। यहीं

कहानी समाप्त हो जाती है। एक ऐसा प्रेम जिसे नायक विनोद समझ ही नहीं सका और नायिका ने जब तक जीवन जिया उस बचपन के आकर्षण और प्रेम से नहीं उबर सकी। मानव सभ्यता पालतू पशुओं और उनके प्रेम से हमेशा जुड़ी रही है। पालतू पशुओं के बिना हमारी सभ्यता की पहचान अधूरी मानी जाती है। चाहे फिर वह नगरीय सभ्यता हो या ग्रामीण। हालांकि ग्रामीण सभ्यता में तो पशु हमारी किसान जीवन संस्कृति के पूरक हैं। उनके बिना हमारे कई काम ऐसे हैं जो हो ही नहीं सकते। पालतू पशुओं को कई बार हम बहुत अजीज मानने लगते हैं और उनके प्रेम में डूब जाते हैं। कई बार हम उन्हें बराबरी का महत्व देने लगते हैं। साहित्य में ऐसी कई रचनाएं हैं जिनमें पालतू पशुओं का वर्णन है। हिंदी कहानी, उपन्यास और कविताओं में कई साहित्यकारों ने भी पशु प्रेम को उजागर किया है। महादेवी और प्रेमचंद जैसे बड़े रचनाकारों में हमें सहज ही याद आता है कि उन्होंने पशु प्रेम पर खूब लिखा। जब हम ओड़िया कहानी पढ़ते हैं तो वहां की कहानी भी हिंदी कहानी से अलग नहीं है। वहां भी ठीक उसी तरह पालतू पशु संस्कृति का वर्णन मिलता है।

कालिंदीचरण पानीग्राही की कहानी 'मांस का विलाप' एक बेहद कारुणिक कहानी है। इसमें अंग्रेजी शासन का समय दिखाया गया है और उस समय शिकार का समय दिखाया गया है। जमीदारी व्यवस्था में अंग्रेजी शासन के समय का वातावरण है। इस कहानी में भी दो पशु का आपसी प्रेम है। सामान्य तौर पर सजातीय पशु आपस में प्रेम करते हैं पर यहां एक हरिन शावक'जली' और घर का अंग्रेजी नस्ल का पालतू कुत्ता 'डोरा' एक दूसरे के साथ रहना, खेलना खूब पसंद करने लगे हैं और जमीदार की बेटी दोनों पशुओं से बहुत प्रेम करती है। जैसे सभी घरों में होता है। बच्चे पालतू पशुओं के बहुत करीब होते हैं। वें पशुओं की भाषा समझते हैं, उनके साथ बात करते हैं और खेलते हैं। इस कहानी में सबसे बड़ी करुणा तब पैदा होती है जब शिकार वाली रात जंगल में कोई शिकार नहीं मिलने पर साथ गई हिरण 'जली' को ही काट कर खाया जाता है। यह अंग्रेज अफसर का हुक्म था जमीदार मना नहीं कर सका। कुत्ता डोरा भी बहुत विरोध करता है पर उसे भी बांध कर रख दिया जाता है। यहाँ कहानी में सबसे बड़ा मोड़ आता है- जमीदार गले के अंदर जली की देह का मांस नहीं निगल पाता है और वह घर आने पर बेटी के प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाता कि जली कहां है। जबकि उसकी बेटी नौकर से यह घटना सुन चुकी होती है कि जमीदार ने शिकार नहीं मिलने पर जली को ही काट कर खा लिया है।

कहानी में कथाकार ने एक मोड़ और पैदा किया वापसी के बाद जमीदार बीमार पड़ जाता है और बीमारी से उबरने के बाद वह अपने रियासत के क्षेत्र में मांसाहार और शिकार निषेध कर देता है। कहानी का वह कथन जेहन में हमेशा स्मरण रहता है जहां जली की मृत्यु लिखी जा रही है शिकार नहीं मिलने पर रात में भूखे सोने की स्थिति आ जाती है लेकिन वही डीआईजी मुस्कुराने लगा रात्रि के भोजन की व्यवस्था हो सकती है। डीआईजी साहब की मुस्कान से मुस्कान मिलाते हुए जमीदार बोले - बहुत अच्छा बताइए। डीआईजी ने कहा अच्छा आपको अपना हिरण देने में कोई आपत्ति तो नहीं? वाह क्या बढ़िया भोजन होगा। इस जंगल से तो आप जब चाहेंगे सैकड़ों हिरन पकड़ सकते हैं। क्यों ? हमारा प्रस्ताव जंचा कि नहीं?"[13]

कहानी का यह हिस्सा भी बड़ी विडंबना पैदा करता है।"भोजन की मेज पर जली का मांस खाते समय जमीदार का अंतर्मन बार-बार इनकार करता रहा। बड़ी मुश्किल से वह मुंह में कुछ डाल सके। प्राणों की व्याकुलता से विचलित थे।[14] कहानी का एक हिस्सा यह भी है कि कुत्ता डोरा भी जमीदार का घर छोड़कर कहीं भाग जाता है। डोरा ने कुछ नहीं खाया।"तमाम दिन बिना खाना खाए पड़ारहा। जमीदार जिस दिन बीमार पड़े जाने वह कहां भाग गया। माधव खोजते - खोजते वहां पहुंचा जहां जली की हत्या की गई थी। डोरा वहीं मिट्टी सूंघ रहा था। उसने अपने प्रिय साथी को खोया था। उसी जगह कि उसे तलाश थी।"[15]

ओड़िया कहानी संसार की ही 'मांस का कोणार्क' एक ऐसी कहानी है जिसमें नगरीय, महानगरीय जीवनशैली, चारित्रिक गिरावट, नशा,वैयक्तिक भ्रष्टाचार और शासन-प्रशासन के भ्रष्टाचार को उजागर किया है।कहानी में कहानीकार सुरेंद्र महंती ने कथावस्तु में 'ड्राई डे' के बहाने से शराब बिक्री और फिर नशा को लेकर एक लंबा चौड़ा वातावरण निर्मित किया है। उसी के बहाने गरीबी,वैयक्तिक भ्रष्टाचार, चरित्र आदि पर गहरा चिंतन और विमर्श खड़ा किया है। सो काल्ड 'प्रिंसिपल ऑफ लाईफ' गहरे चिंतन के बाद फीका पड़ने लगता है। एक लॉटरी टिकट बेचने वाला गरीब उसकी ऐसी आंखें खोलता है कि वह नंगा हो जाता है। अपनी आत्मा पर पड़े सारे दाग उसे साफ दिखाई देने लगते हैं। वह महानगरीय और अभिजात संस्कृति की असली मांग जानता है और उसे पेश करता है करता हुआ कहता है "लेकिन साहब आपके समाज में दो चीजों की काफी मांग है सेक्स और सस्ता रुपया। मैं अपने खोलिए थैले में ये दोनों चीजें लिए घूम रहा हूं। पसंद आया तो दो चार पीस ले लीजिए। मैं ज्यादा समय बर्बाद नहीं कर सकता। फोटोग्राफर दोस्त आ गया होगा फोटो खींचने।"[16]

कहानी की विडंबना पर पाठक भावशून्य हो जाता है जब वह यह जानता है कि इन शहरी कामवासना के लालची पुरुषों को वह स्वयं और अपनी पत्नी की नग्न तस्वीरें खिंचवा कर बेजता है और साथ में लॉटरी की टिकट अभी। अपनी इस बात पर वह साहित्य, समाज, राजनीति और व्यापार के सभी को कटघरे में खड़े कर देता है। "साहब यह कोई खराब धंधा तो नहीं। राजनीति, साहित्य, व्यापार आदि तुम्हारे सभी धंधे आज इसी तरीके से चल रहे हैं। नेताओं के लड़कों की बात ना कहना बेहतर होगा। ताकतलाल ग्रुप के विज्ञापन के लिए ऐसे चित्र चाहिए और साहित्य। उसके बारे में क्या कहें। नंगी औरतों पर लिखी जा रही है गरमागरम कहानियां। यदि वे शिष्ट तथा भद्र हैं तो मैं कैसे अश्लील बन सकता हूं। आज के समाज की नीव तो अश्लीलता ही है।"[17]

नामवर सिंह ने कहानी की कसौटी पर चिंतन करते हुए लिखा है कि "जीवन के जिन मूल्यों की कसौटी पर हम कविता उपन्यास आदि साहित्य रूपों के परीक्षा करते हैं, उन्हीं पर कहानी की भी परीक्षा होनी

चाहिए। इससे कहानी समीक्षा का एक ढांचा तो तैयार होगा ही, साथ साथ मानवीय मूल्यों के संबंध में हमारा ज्ञान भी बढ़ेगा और संपूर्ण साहित्य के मानो और पर्याप्तता भी क्रमशः कम होगी ।"[18] आलेख के अंत में मानवीय संवेदना की एक बेजोड़ कहानी की विवेचना करना प्रासंगिक होगा जबकि आज स्वार्थ इतना बढ़ गया है कि अपने अलावा कोई दूसरों के बारे में कम ही सोचता है और गरीब और भिखारी पागलों के बारे में तो शायद बहुत ही कम लोग सोचते होंगे।'ढीठ' कहानी में विकास के बढ़ते आयामों में पानी के बांध का वर्णन है। जिसके कारण गांव भर के लोगों को अपनी जमीन छोड़नी पड़ती है। हालांकि इस विषय पर कई कहानियां और उपन्यास भी लिखे गए हैं। कमोबेश वैसी ही कथा दूसरी भी है पर असली कहानी उस ढीठ की है जो बांध बनने के बाद भी अपनी जमीन नहीं छोड़ता और पागलों जैसा हो जाता है। पूरी कहानी एक बालक कहता है जो अपने इंजीनियर पिता को एक आदर्श मानता है और वह सचमुच एक आदर्श इंसान है, जो ढीठ को एक रात पानी में डूबने से बचा लेता है । उसे आंधी-तूफान वाली रात में घर लाता है । उधर देखो ना, वहां कौन है? पिताजी ने ड्योडी की तरफ इशारा किया मां देखने गई। मैं भी उसके पीछे पीछे गया ।वहां बैठा था ढीठ। भीगी बिल्ली की तरह कांप रहा था और मुस्कुरा रहा था।"[19]

निष्कर्ष

यह कहानियाँ मानवीय संवेदना की दृष्टि से एक बड़ी खाँचें में दिखाई देती हैं। इसी तरह से उड़िया भाषा की समस्त कहानियों में मानवीय संवेदना का स्वरूप परिलक्षित होता है। ओड़िया कहानी संसार समय के साथ बदलती मानव सभ्यता के मूल्यों के साथ ही भारत की सांस्कृतिक विरासत, नैतिकता बोध और मानवीय मूल्यों को निहित करने वाली कहानियां हैं।

सन्दर्भ सूची

1. भारतीय साहित्य के इतिहास की समस्याएं, रामविलास शर्मा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-145
2. आधुनिक साहित्य और इतिहास बोध, नित्यानंद तिवारी, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ- 46
3. भारतीय श्रेष्ठ कहानियां खंड-1 संपादक सन्हैयालाल ओझा, सह संपादक मार्कंडेय, लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ 23
4. वही 25
5. वही 27
6. वही 30
7. वही 11
8. वही 10
9. वही13
10. वही 20
11. वही 21
12. वही 19
13. वही 35
14. वही 37
15. वही38
16. वही 51
17. वही 50 – 51
18. कहानी नई कहानी, नामवर सिंह, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृष्ठ - 19
19. भारतीय श्रेष्ठ कहानियां खंड-1 संपादक सन्हैयालाल ओझा, सह संपादक मार्कंडेय, लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ 58

RRIJM 2015, All Rights Reserved